अध्याय-४

श्री साई बाबा का शिरडी में प्रथम आगमन, सन्तों का अवतार कार्य, पवित्र तीर्थ शिरडी, श्री साईबाबा का व्यक्तित्व, गौली बुवा का अनुभव, श्री विट्ठल का प्रगट होना, क्षीरसागर की कथा, दासगणु का प्रयाग - स्नान, श्री साईबाबा का शिरडी में प्रथम आगमन, तीन वाड़े।

संतों का अवतार कार्य

भगवद्गीता (चौथा अध्याय ७-८) में भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं कि ''जब जब धर्म की हानि और अधर्म की वृद्धि होती है, तब-तब मैं अवतार धारण करता हूँ। धर्म-स्थापन, दुष्टों का विनाश तथा साधुजनों के परित्राण के लिये मैं युग-युग में जन्म लेता हूँ।'' साधु और संत भगवान के प्रतिनिधिस्वरूप हैं। वे उपयुक्त समय पर प्रगट होकर अपनी कार्यप्रणाली द्वारा अपना अवतार-कार्य पूर्ण करते हैं। अर्थात् जब ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य अपने कर्त्तव्यों से विमुख हो जाते हैं, जब शूद्र उच्च जातियों के अधिकार छीनने लगते हैं, जब धर्म के आचार्यों का अनादर तथा निंदा होने लगती है, जब लोग निषिद्ध भोज्य पदार्थों और मदिरा आदि का सेवन करने लगते हैं, जब धर्म की आड़ में निंदित कार्य होने लगते हैं, जब भिन्न-भिन्न धर्मावलम्बी परस्पर लड़ने लगते हैं, जब ब्राह्मण संध्यादि कर्म छोड़ देते हैं, कर्मठ पुरुषों को धार्मिक कृत्यों में अरुचि उत्पन्न हो जाती है, जब योगी ध्यानादि कर्म करना छोड़ देते हैं और जब जनसाधारण की ऐसी धारणा हो जाती है कि केवल **धन, संतान और स्त्री ही सर्वस्व है तथा इस प्रकार जब लोग सत्य-मार्ग से विचलित होकर अधः पतन की ओर अग्रसर होने लगते हैं, तब संत प्रगट होकर अपने उपदेशों एवं आचरण के द्वारा धर्म की संस्थापना करते हैं।** वे समुद्र के ज्योतिस्तम्भ

की तरह हमारा उचित मार्गदर्शन करते तथा सत्य पथ पर चलने को प्रेरित करते हैं। इसी मार्ग पर अनेकों संत-निवृत्तिनाथ, ज्ञानदेव, मुक्ताबाई, नामदेव, गोरा, गोणाई, एकनाथ, तुकाराम, नरहरि, नरसी भाई, सजन कसाई, सावंता माली और रामदास तथा कई अन्य संत सत्य-मार्ग का दिग्दर्शन कराने के हेतु भिन्न-भिन्न अवसरों पर प्रगट हुए और इन सबके पश्चात् शिरडी में श्री साईबाबा का अवतार हुआ।

पवित्र तीर्थ शिरडी

अहमदनगर जिले में गोदावरी नदी के तट बड़े ही भाग्यशाली हैं, जिन पर अनेक संतों ने जन्म धारण किया और अनेकों ने वहाँ आश्रय पाया। ऐसे संतों में श्री ज्ञानेश्वर महाराज प्रमुख थे। शिरडी, अहमदनगर जिले के कोपरगाँव तालुका में है। गोदावरी नदी पार करने के पश्चात् मार्ग सीधा शिरडी को जाता है। आठ मील चलने पर जब आप नीमगाँव पहुँचेंगे तो वहाँ से शिरडी दृष्टिगोचर होने लगती है। कृष्णा नदी के तट पर अन्य तीर्थस्थान गाणगापुर, नरसिंहवाड़ी, और औदुम्बर के समान ही शिरडी भी प्रसिद्ध तीर्थ है। जिस प्रकार दामोजी ने मंगलवेढ़ा को (पंढरपुर के समीप), समर्थ रामदास ने सज्जनगढ़ को, दत्तावतार श्री नरसिंह सरस्वती वे वाड़ी को पवित्र किया, उसी प्रकार श्री साईनाथ ने शिरडी में अवतीर्ण होकर उसे पावन बनाया।

श्री साईबाबा का व्यक्तित्व

श्री साईबाबा के सान्निध्य से शिरडी का महत्त्व विशेष बढ़ गया। अब हम उनके चरित्र का अवलोकन करेंगे। उन्होंने इस भवसागर पर विजय प्राप्त कर ली थी, जिसे पार करना महान् दुष्कर तथा कठिन है। शांति उनका आभूषण था तथा वे ज्ञान की साक्षात् प्रतिमा थे। वैष्णव भक्त सदैव वहाँ आश्रय पाते थे। दानवीरों में वे राजा कर्ण के समान दानी थे। वे समस्त सारों के साररूप थे। ऐहिक पदार्थों से उन्हें अरुचि थी। सदा आत्मस्वरूप में निमग्न रहना ही उनके जीवन का मुख्य ध्येय था। अनित्य वस्तुओं का आकर्षण उन्हें छू भी नहीं गया था। उनका हृदय शीशे के सदृश उज्ज्वल था। उनके श्री-मुख से सदैव अमृत वर्षा होती थी। अमीर और गरीब उनके लिये दोनों एक समान

थे। मान-अपमान की उन्हें किंचित्मात्र भी चिंता न थी। वे निर्भय होकर सम्भाषण करते, भाँति-भाँति के लोगों से मिलजुल कर रहते, नर्त्तकियों का अभिनय तथा नृत्य देखते और गज़ल-कव्वालियाँ भी सुनते थे। इतना सब करते हुए भी उनकी समाधि किंचित्मात्र भी भंग न होती थी। अल्लाह का नाम सदा उनके ओठों पर था। जब दुनिया जागती तो वे सोते और जब दुनिया सोती तो वे जागते थे।[१] उनका अन्तःकरण प्रशान्त महासागर की तरह शांत था। न उनके आश्रम का कोई निश्चय कर सकता था और न उनकी कार्यप्रणाली का अन्त पा सकता था। कहने के लिये तो वे एक स्थान पर निवास करते थे, परन्तु विश्व के समस्त व्यवहारों व व्यापारों का उन्हें भली-भाँति ज्ञान था। उनके दरबार का रंग ही निराला था। वे प्रतिदिन अनेक किंवदंतियाँ कहते थे, परन्तु उनकी अखंड शांति किंचित्मात्र भी विचलित न होती थी। वे सदा मस्जिद की दीवार के सहारे बैठे रहते थे तथा प्रातः, मध्याह्न और सायंकाल लेंडी और चावड़ी की ओर वायु-सेवन करने जाते तो भी सदा आत्मस्थित ही रहते थे। स्वतः सिद्ध होकर भी वे साधकों के समान आचरण करते थे। वे विनम्र, दयालु तथा अभिमानरहित थे। उन्होंने सबको सदा सुख पहुँचाया। ऐसे थे श्री साईबाबा, जिनके श्री-चरणों का स्पर्श कर शिरडी पावन बन गई। उसका महत्व असाधारण हो गया। जिस प्रकार ज्ञानेश्वर ने आलंदी और एकनाथ ने पैंठण का उत्थान किया, वही गति श्री साईबाबा द्वारा शिरडी को प्राप्त हुई। शिरडी के फूल, पत्ते, कंकड़ और पत्थर भी धन्य हैं, जिन्हें श्री साई चरणाम्बुजों का चुम्बन तथा उनकी चरण-रज मस्तक पर धारण करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। भक्तगण को शिरडी एक दूसरा पंढरपुर, जगन्नाथपुरी, द्वारका, बनारस (काशी), महाकालेश्वर तथा गोकर्ण महाबलेश्वर बन गई। श्री साई का दर्शन करना ही भक्तों का वेदमंत्र था, जिसके परिणामस्वरूप आसक्ति घटती और आत्मदर्शन का पथ सुगम होता था। उनका श्रीदर्शन ही योग-साधन था और उनसे वार्तालाप

---

१. सुखिया सब संसार है, खाये अरु सोये।
दुखिया दास कबीर है, जागे अरु रोये॥ - कबीर

करने से समस्त पाप नष्ट हो जाते थे। उनका पादसेवन करना ही त्रिवेणी (प्रयाग) स्नान के समान था तथा चरणामृत पान करने मात्र से ही समस्त इच्छाओं की तृप्ति होती थी। उनकी आज्ञा हमारे लिये वेद सदृश थी। प्रसाद तथा उदी ग्रहण करने से चित्त की शुद्धि होती थी। वे ही हमारे राम और कृष्ण थे, जिन्होंने हमें मुक्ति प्रदान की, वे ही हमारे परब्रह्म थे। वे छन्दों से परे रहते तथा कभी निराश व हताश नहीं होते थे। वे सदा आत्म-स्थित, चैतन्यघन तथा आनंद की मंगलमूर्ति थे। कहने को तो शिरडी उनका मुख्य केन्द्र था, परन्तु उनका कार्यक्षेत्र पंजाब, कलकत्ता, उत्तरी भारत, गुजरात, ढाका और कोंकण तक विस्तृत था। श्री साईबाबा की कीर्त्ति दिन-प्रतिदिन चहुँ ओर फैलने लगी और जगह-जगह से दर्शनार्थ आकर उनके भक्त लाभ उठाने लगे। केवल दर्शन से ही मनुष्यों, चाहे वे शुद्ध अथवा अशुद्ध हृदय के हों, के चित्त को परम शांति मिल जाती थी। उन्हें उसी आनन्द का अनुभव होता था, जैसा कि पंढरपुर में श्री विट्ठल के दर्शन से होता है। यह कोई अतिशयोक्ति नहीं है। देखिये, एक भक्त ने यही अनुभव पाया है :-

गौली बुवा

लगभग ९५ वर्ष के वयोवृद्ध भक्त, जिनका नाम गौली बुवा था, पंढरी के एक वारकरी थे। वे ८ मास पंढरपुर तथा ४ मास (आषाढ़ से कार्तिक तक) गंगातट पर निवास करते थे। सामान ढोने के लिये वे एक गधे को अपने पास रखते और एक शिष्य भी सदैव उनके साथ रहता था। वे प्रतिवर्ष वारी लेकर पंढरपुर जाते और लौटते समय श्री बाबा के दर्शनार्थ शिरडी आते थे। बाबा पर उनका अगाध प्रेम था। वे बाबा की ओर एकटक निहारते और कह उठते थे कि ये तो श्री पंढरीनाथ, श्री विट्ठल के अवतार हैं, जो अनाथ-नाथ, दीन दयालु और दीनों के नाथ हैं। गौली बुवा श्री विठोबा के परम भक्त थे। उन्होंने अनेक बार पंढरी की यात्रा की तथा प्रत्यक्ष अनुभव किया कि श्री साईबाबा सचमुच में ही पंढरीनाथ हैं।

विट्ठल स्वयं प्रकट हुए

श्री साईबाबा की ईश्वर-चिंतन और भजन में विशेष अभिरुचि थी। वे सदैव ''अल्लाह मालिक'' पुकारते तथा भक्तों से कीर्त्तन-सप्ताह करवाते थे। इसे ''नामसप्ताह'' भी कहते हैं। एक बार उन्होंने दासगणु को कीर्त्तनसप्ताह करने की आज्ञा दी। दासगणु ने बाबा से कहा कि ''आपकी आज्ञा मुझे शिरोधार्य है, परन्तु इस बात का आश्वासन मिलना चाहिए कि सप्ताह के अंत में विट्ठल अवश्य प्रगट होंगे।'' बाबा ने अपना हृदय स्पर्श करते हुए कहा कि विट्ठल अवश्य प्रगट होंगे। परन्तु साथ ही भक्तों में श्रद्धा व तीव्र उत्सुकता का होना भी अनिवार्य है। ठाकुरनाथ की डंकपुरी, विट्ठल की पंढरी, रणछोड़ की द्वारका यहीं तो है। किसी को दूर जाने की आवश्यकता नहीं है। क्या विट्ठल कहीं बाहर से आएंगे? वे तो यहीं विराजमान हैं। **जब भक्तों में प्रेम और भक्ति का स्त्रोत प्रवाहित होगा तो विट्ठल स्वयं ही यहाँ प्रगट हो जाएँगे।**

सप्ताह समाप्त होने के बाद विट्ठल भगवान इस प्रकार प्रगट हुए। काकासाहेब दीक्षित सदैव की भाँति स्नान करने के पश्चात् जब ध्यान करने को बैठे तो उन्हें विट्ठल के दर्शन हुए। दोपहर के समय जब वे बाबा के दर्शनार्थ मस्जिद पहुँचे तो बाबा ने उनसे पूछा, ''क्यों विट्ठल पाटील आए थे न? क्या तुम्हें उनके दर्शन हुए? वे बहुत चंचल हैं। उनको दृढ़ता से पकड़ लो। यदि थोड़ी भी असावधानी की तो वे बचकर निकल जाएँगे।'' यह प्रात:काल की घटना थी और दोपहर के समय उन्हें पुन: दर्शन हुए। उसी दिन एक चित्र बेचने वाला विठोबा के २५-३० चित्र लेकर वहाँ बेचने को आया। यह चित्र ठीक वैसा ही था, जैसा कि काकासाहेब दीक्षित को ध्यान में दर्शन हुए थे। चित्र देखकर और बाबा के शब्दों का स्मरण कर काकासाहेब को बड़ा विस्मय और प्रसन्नता हुई। उन्होंने एक चित्र सहर्ष खरीद लिया और उसे अपने देवघर में प्रतिष्ठित कर दिया।

ठाणा के अवकाशप्राप्त मामलतदार श्री बी.व्ही. देव ने अपने अनुसंधान के द्वारा यह प्रमाणित कर दिया है कि शिरडी पंढरपुर की परिधि में आती है। दक्षिण में पंढरपुर श्रीकृष्ण का प्रसिद्ध स्थान है,

अतः शिरडी ही द्वारका है। (साई लीला पत्रिका भाग १२, अंक १,२,३ के अनुसार)

द्वारका की एक और व्याख्या सुनने में आई है, जो कि कै. नारायण अय्यर द्वारा लिखित ''भारतवर्ष का स्थायी इतिहास'' में स्कन्दपुराण (भाग २, पृष्ठ ९०) से उद्धृत की गई है। वह इस प्रकार है :-

''चतुर्वर्णामपि वर्गाणां यत्र द्वाराणि सर्वतः।
अतो द्वारावतीत्युक्ता विद्वद्भिस्तत्ववादिभिः॥''

जो स्थान चारों वर्णों के लोगों को धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष के लिये सुलभ हो, दार्शनिक लोग उसे 'द्वारका' के नाम से पुकारते हैं। शिरडी में बाबा की मस्जिद केवल चारों वर्णों के लिये ही नहीं, अपितु दलित, अस्पृश्य और भागोजी शिंदे जैसे कोढ़ी आदि सब के लिये खुली थी। अतः शिरडी को 'द्वारका' कहना ही सर्वथा उचित है।

भगवंतराव क्षीरसागर की कथा

श्री विट्ठलपूजन में बाबा को कितनी रुचि थी, यह भगवंतराव क्षीरसागर की कथा से स्पष्ट है। भगवंतराव के पिता विठोबा के परम भक्त थे, जो प्रतिवर्ष पंढरपुर को वारी लेकर जाते थे। उनके घर में विठोबा की एक मूर्त्ति थी, जिसकी वे नित्यप्रति पूजा करते थे। उनकी मृत्यु के पश्चात् उनके पुत्र भगवंतराव ने वारी, पूजन, श्राद्ध इत्यादि समस्त कर्म करना छोड़ दिया। जब भगवंतराव शिरडी आए तो बाबा उन्हें देखते ही कहने लगे कि, ''इनके पिता मेरे परम मित्र थे। इसी कारण मैंने इन्हें यहाँ बुलाया है। इन्होंने कभी नैवेद्य अर्पण नहीं किया तथा मुझे और विठोबा को भूखों मारा है। इसलिये मैंने इन्हें यहाँ आने को प्रेरित किया है। अब मैं इन्हें हठपूर्वक पूजा में लगा दूँगा।''

दासगणु का प्रयागस्नान

गंगा और यमुना नदी के संगम पर प्रयाग प्रसिद्ध पवित्र तीर्थस्थान है। हिन्दुओं की ऐसी भावना है कि वहाँ स्नानादि करने से समस्त पाप नष्ट हो जाते हैं। इसी कारण प्रत्येक पर्व पर सहस्त्रों भक्तगण वहाँ जाते हैं और स्नान का लाभ उठाते हैं। एक बार दासगणु ने भी वहाँ जाकर स्नान करने का निश्चाय किया। इस विचार से वे बाबा से आज्ञा लेने

उनके पास गए। बाबा ने कहा कि ''**इतनी दूर व्यर्थ भटकने की क्या आवश्यकता है? अपना प्रयाग तो यहीं है। मुझ पर विश्वास करो।**'' आश्चर्य, महान् आश्चर्य! जैसे ही दासगणु बाबा के चरणों पर नत हुए तो बाबा के श्री चरणों से गंगा-यमुना की धारा वेग से प्रवाहित होने लगी। यह चमत्कार देखकर दासगणु का प्रेम और भक्ति उमड़ पड़ी। आँखों से अश्रुओं की धारा बहने लगी। उन्हें कुछ अंत:स्फूर्ति हुई और उनके मुख से श्री साई बाबा की स्त्रोतस्विनी स्वत: प्रवाहित होने लगी।

श्री साईबाबा का शिरडी में प्रथम आगमन

श्री साईबाबा के माता पिता, उनके जन्म और जन्म-स्थान का किसी को भी ज्ञान नहीं है। इस सम्बन्ध में बहुत छानबीन की गई। बाबा से तथा अन्य लोगों से भी इस विषय में पूछताछ की गई, परन्तु कोई संतोषप्रद उत्तर अथवा सूत्र हाथ न लग सका। यथार्थ में हम लोग इस विषय में सर्वथा अनभिज्ञ हैं। नामदेव और कबीरदास जी का जन्म अन्य लोगों की भाँति नहीं हुआ था। वे बाल-रूप में प्रकृति की गोद में पाये गए थे। नामदेव भीमरथी नदी के तीर पर गोनाई को और कबीर भागीरथी नदी के तीर पर तमाल को पड़े हुए मिले थे, और ऐसा ही श्री साईबाबा के सम्बन्ध में भी था। वे शिरडी में नीम-वृक्ष के तले सोलह वर्ष की तरुणावस्था में स्वयं भक्तों के कल्याणार्थ प्रकट हुए थे। उस समय भी वे पूर्ण ब्रह्मज्ञानी प्रतीत होते थे। स्वप्न में भी उनको किसी लौकिक पदार्थ की इच्छा नहीं थी। उन्होंने माया को ठुकरा दिया था और मुक्ति उनके चरणों में लोटती थी। शिरडी ग्राम की एक वृद्ध स्त्री नाना चोपदार की माँ ने उनका इस प्रकार वर्णन किया है - एक तरुण, स्वस्थ, फुर्तीला तथा अति रूपवान् बालक सर्वप्रथम नीम वृक्ष के नीचे समाधि में लीन दिखाई पड़ा। सर्दी व गर्मी की उन्हें किंचित्मात्र भी चिंता न थी। उन्हें इतनी अल्प आयु में इस प्रकार कठिन तपस्या करते देखकर लोगों को महान् आश्चर्य हुआ। दिन में वे किसी से भेंट नहीं करते थे और रात्रि में निर्भय होकर एकांत में घूमते थे। लोग आश्यर्यचकित होकर पूछते फिरते थे कि इस युवक का कहाँ

से आगमन हुआ है? उनकी बनावट तथा आकृति इतनी सुन्दर थी कि एकबार देखने मात्र से लोग आकर्षित हो जाते थे। वे सदा नीम वृक्ष के नीचे बैठे रहते थे और किसी के द्वार पर न जाते थे। यद्यपि वे देखने में युवक प्रतीत होते थे, परन्तु उनका आचरण महात्माओं के सदृश था। वे त्याग और वैराग्य की साक्षात् प्रतिमा थे। एक बार एक आश्चर्यजनक घटना हुई। एक भक्त को भगवान खंडोबा का संचार हुआ। लोगों ने शंका-निवारणार्थ उनसे प्रश्न किया कि ''हे देव! कृपया बतलाइये कि ये किस भाग्यशाली पिता की संतान हैं और इनका कहाँ से आगमन हुआ है?'' भगवान् खंडोबा ने एक कुदाली मँगवाई और एक निर्दिष्ट स्थान पर खोदने का संकेत किया। जब वह स्थान पूर्ण रूप से खोदा गया तो वहाँ एक पत्थर के नीचे ईंटें पाई गईं। पत्थर को हटाते ही एक द्वार दिखा, जहाँ चार दीप जल रहे थे। उन दरवाजों का मार्ग एक गुफा में जाता था, जहाँ गौमुखी आकार की इमारत, लकड़ी के तख्ते, मालायें आदि दिखाई पड़ीं। भगवान् खंडोबा कहने लगे कि इस युवक ने इस स्थान पर बारह वर्ष तपस्या की है। तब लोग युवक से प्रश्न करने लगे। परंतु उसने यह कहकर बात टाल दी कि यह मेरे श्री गुरूदेव की पवित्र भूमि है अतएव मेरा पूज्य स्थान है, तब लोगों ने उस दरवाजे को पूर्ववत् बन्द कर दिया। जिस प्रकार अश्वत्थ तथा औदुम्बर वृक्ष पवित्र माने जाते हैं, उसी प्रकार बाबा ने भी इस नीम वृक्ष को उतना ही पवित्र माना और प्रेम किया। म्हालसापति तथा शिरडी के अन्य भक्त इस स्थान को बाबा के गुरु का समाधि-स्थान मानकर सदैव नमन किया करते थे।

तीन वाड़े

नीम वृक्ष के आसपास की भूमि श्री हरी विनायक साठे ने मोल ले ली और उस स्थान पर एक विशाल भवन का निर्माण किया, जिसका नाम साठे-वाड़ा रखा गया। बाहर से आने वाले यात्रियों के लिये वह वाड़ा ही एकमात्र विश्राम स्थान था, जहाँ सदैव भीड़ रहा करती थी। नीम वृक्ष के नीचे चारों ओर चबूतरा बाँधा गया। सीढ़ियों के नीचे दक्षिण की ओर एक छोटा सा मन्दिर है, जहाँ भक्त लोग

चबूतरे के ऊपर उत्तराभिमुख होकर बैठते हैं। ऐसा विश्वास किया जाता है कि जो भक्त गुरुवार तथा शुक्रवार की संध्या को वहाँ धूप, अगरबत्ती आदि सुगन्धित पदार्थ जलाते हैं, वे ईश-कृपा से सदैव सुखी होंगे। यह वाड़ा बहुत पुराना तथा जीर्ण-शीर्ण स्थिति में था तथा इसके जीर्णोद्धार की नितान्त आवश्यकता थी, जो संस्थान द्वारा पूर्ण कर दी गई। कुछ समय के पश्चात् एक दूसरे वाड़े का निर्माण हुआ, जिसका नाम दीक्षित-वाड़ा रखा गया। काकासाहेब दीक्षित, कानूनी सलाहकार (Solicitor) जब इंग्लैंड में थे, तब वहाँ उन्हें किसी दुर्घटना से पैर में चोट आ गई थी। उन्होंने अनेक उपचार किये, परन्तु पैर अच्छा न हो सका। नानासाहेब चाँदोरकर ने उन्हें बाबा की कृपा प्राप्त करने का परामर्श दिया। इसलिये उन्होंने सन् १९०९ में बाबा के दर्शन किए। उन्होंने बाबा से पैर के बदले अपने मन की पंगुता दूर करने की प्रार्थना की। बाबा के दर्शन से उन्हें इतना सुख प्राप्त हुआ कि उन्होंने स्थायी रूप से शिरडी में रहना स्वीकार कर लिया और इसी कारण उन्होंने अपने तथा भक्तों के हेतु एक वाड़े का निर्माण कराया। इस भवन का शिलान्यास दिनांक ९-१२-१९१० को किया गया। उसी दिन अन्य दो विशेष घटनाएँ घटित हुईं - (१) श्री दादासाहेब खापर्डे को घर वापस लौटने की अनुमति प्राप्त हो गई और (२) चावड़ी में रात्रि को आरती आरम्भ हो गई। कुछ समय में वाड़ा सम्पूर्ण रूप से बन गया और रामनवमी (१९११) के शुभ अवसर पर उसका यथाविधि उद्घाटन कर दिया गया। इसके बाद एक और वाड़ा-मानो एक शाही भवन-नागपुर के प्रसिद्ध श्रीमंत बूटी ने बनवाया। इस भवन के निर्माण में बहुत धनराशि लगाई गई। उनकी समस्त निधि सार्थक हो गई, क्योंकि बाबा का शरीर अब वहीं विश्रान्ति पा रहा है, और फिलहाल वह 'समाधि मंदिर' के नाम से विख्यात है। इस मंदिर के स्थान पर पहले एक बगीचा था, जिसमें बाबा स्वयं पौधों को सींचते और उनकी देखभाल किया करते थे। जहाँ पहले एक छोटी-सी कुटी भी नहीं थी, वहाँ तीन-तीन वाड़ों का निर्माण हो गया। इन सब में साठे-वाड़ा पूर्वकाल में बहुत ही उपयोगी था।

बगीचे की कथा, वामन तात्या की सहायता से स्वयं बगीचे की

देखभाल, शिरडी से श्री साईबाबा की अस्थायी अनुपस्थिति तथा चाँद पाटील की बारात में पुनः शिरडी लौटना, देवीदास, जानकीदास और गंगागीर की संगति, मोहिद्दीन तम्बोली के साथ कुश्ती, मस्जिद में निवास, श्री डेंगले व अन्य भक्तों पर प्रेम तथा अन्य घटनाओं का अगले अध्याय में वर्णन किया गया है।

॥ श्री सद्गुरु साईनाथार्पणमस्तु। शुभं भवतु॥